विकास की नूतन अवधारणा-1

❁ डॉ. समणी हिमप्रज्ञा एवं समणी चैतन्यप्रज्ञा

आज का जमाना विकास का जमाना है। प्रत्येक दिशा में विकास हो रहा है। मनुष्य निरन्तर विकास करता आ रहा है। विकास के आधार पर विश्व को तीन भागों में बांटा जा सकता है-अविकसित राष्ट्र, विकासशील राष्ट्र और विकसित राष्ट्र।

वर्तमान में विकास की अवधारणा का प्रमुख आधार है-आर्थिक विकास। अर्थाधारित विकास की इस अवधारणा के फलस्वरूप उत्पन्न वर्तमान जीवन और विश्व की भयावह स्थितियों ने इस पर पुनर्विचार करने के लिए बाध्य कर दिया है। स्थाई विकास की दृष्टि से इस पर पुनः चिन्तन की आवश्यकता महसूस की जा रही है।

आचार्य महाप्रज्ञ ने इस समस्या की ओर ध्यान दिया और उन्होंने स्थाई विकास के लिए अहिंसक और संतुलित विकास पर बल दिया। विकास का चिन्तन अहिंसा की दृष्टि से किया। उन्होंने कहा कि जहां अनावश्यक चीजों का उत्पादन ज्यादा है, उनको विकसित राष्ट्र कहा जा रहा है। जो मानक मानव जाति के लिए आवश्यक नहीं है, उन्हें विकास के प्रमुख मानक मान लिया गया है और उन्हें पूरा करने वाले देशों को विकसित राष्ट्र माना जा रहा है। वह राष्ट्र, जिसके लाखों-लाखों नागरिक खाने को तरसते हैं, वह अरबों-अरबों रुपये के हथियारों की खरीदी, बिक्री करता है और ऐसे मकानों का निर्माण करता है जिनकी कोई आवश्यकता नहीं है, उसे विकसित देश मान लिया गया है। दूसरी ओर रोटी, कपड़ा, मकान, शिक्षा और चिकित्सा जो जीवन की मूलभूत आवश्यकता है, उनके उत्पादन को गौण मान लिया गया है। विकासवादी इस चिन्तन ने समाज में प्रतिक्रियात्मक हिंसा को पनपने का अवसर दिया है जो स्थाई विकास के लिए सबसे बड़ी बाधा है।

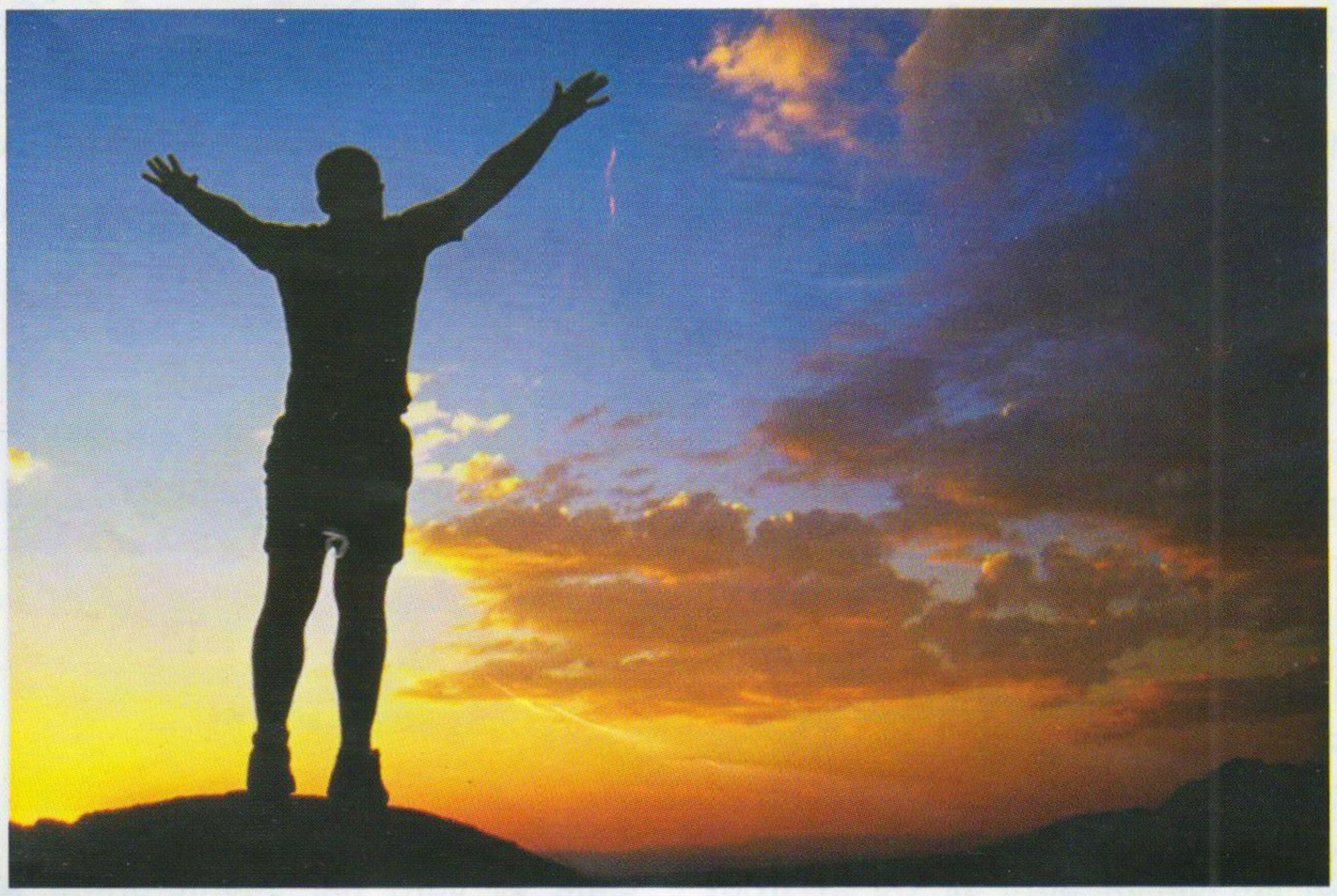

आचार्यश्री महाप्रज्ञ ने विकास की परिभाषा बदल दी। उनके अनुसार विकास की परिभाषा इस प्रकार होनी चाहिए कि जिस राष्ट्र में नैतिकता अधिक है, सदाचार ज्यादा है, हिंसा कम है, अहिंसा का विकास है, लोग शांति और सुख के साथ जीते हैं, जहां पागलखाने या मेंटल हॉस्पिटल कम हैं, जेलें कम हैं, वह राष्ट्र और समाज विकसित है। यह परिभाषा मनुष्य को मनुष्यता के निकट ले जाती है। आज जो परिभाषा की जा रही है उसमें मनुष्य का हित नहीं, अहित हो रहा है अतः विकास की अवधारणा को बदलना आवश्यक है। धारणा के बदलने से ही हिंसा को कम किया जा सकता है और अहिंसा पर आधारित स्थूल विकास की कल्पना साकार की जा सकती है। अहिंसा के विकास के लिए मस्तिष्कीय प्रशिक्षण भी जरूरी है। इसके बिना सामाजिक और आर्थिक संघर्ष को मिटाया नहीं जा सकता है। अहिंसक चेतना के विकास के लिए आचार्य महाप्रज्ञ ने आचारशास्त्रीय पांच सूत्रों को अपनाने पर बल दिया। वे पांच सूत्र हैं-

1. मानवीय एकता
2. संवेदनशीलता
3. करुणा
4. नैतिकता
5. साधन-शुद्धि

मानवीय एकता

अहिंसा की चेतना के लिए महत्त्वपूर्ण तत्त्व है-मानवीय एकता। मानवीय एकता होने से स्वार्थ की बात समाप्त हो जाती है। मानवीय एकता विकसित होने पर अमीर व्यक्ति गरीब व्यक्ति को हीन या घृणा की दृष्टि से नहीं देखता है।

मानवीय एकता इसलिए खंडित हो रही है कि मनुष्य के जीवन से करुणा, संवेदनशीलता, सहानुभूति के तत्त्व समाप्त हो रहे हैं। जो समाज को जोड़ते हैं, वे सभी तत्त्व तिरोहित हो रहे हैं। ऐसी स्थिति में कोई भी शास्त्र सम्यक् रूप से काम नहीं कर सकता। आज का अर्थशास्त्र धनी लोगों को और अधिक धनी बनाने में सफल हो रहा है। आश्चर्य इस बात का है कि विकास और प्रगति के आंकड़े शेयर मार्केट के उछाल और मंदी के आधार पर निर्धारित होते हैं। मुद्रा स्फीति का घटना-बढ़ना और घरेलू उत्पाद की नीची या ऊंची दर यदि अमीरी-गरीबी की खाई को पाटने में सहायक होती तो कब का ऐसा हो चुका होता। किंतु यह सब धनपति और वित्त मंत्री के खेल हैं। लोकसभा और विधानसभा में कितने ही आंकड़े उछालते रहें, किन्तु भूख और गरीबी का निवारण इस खेल से संभव नहीं है।

आज नए सिरे से अर्थशास्त्रीय अवधारणाओं पर विचार करना आवश्यक है। मनुष्य की इच्छा असीम रहती है इसलिए वह उचित-अनुचित पर विचार कम करता है। महावीर ने सामाजिक व्यक्तियों के दो स्तर बतलाए-प्रथम कोटि के वे लोग हैं जो सीमित इच्छा रखते हैं। उसके साथ प्रवृत्ति भी कम करते हैं और संग्रह भी कम करते हैं। दूसरे कोटि के वे लोग हैं जो असीमित इच्छाएं रखते हैं। उसके साथ अत्यधिक संग्रह और अत्यधिक उपभोग में लिप्त रहते हैं। इन दो कोटि के लोग जहां होते हैं वहां एक व्यवस्था की आवश्यकता होती है जो सामाजिक व्यवस्था और राजकीय व्यवस्था में संतुलन कर सके। आज ऐसा नहीं हो रहा है। इसलिए समस्या जटिल होती जा रही है।

विकास के लिए बड़ी-बड़ी योजनाएं बनाई जाती हैं। बड़े कारखाने, बड़े उद्योग स्थापित किये जाते हैं लेकिन इन योजनाओं को गरीबों को ध्यान में रखकर नहीं बनाया जाता है। ये बड़े कारखाने, बड़ी इमारतें गरीब के मन में हिंसा को जन्म देती है। इस पर विचार किए बिना विकास और प्रगति आगे नहीं बढ़ सकती। डॉ. राममनोहर लोहिया कहा करते थे कि एक और दस का अंतर मान्य हो सकता है, किन्तु यहां तो एक और नब्बे का अनुपात है। आदमी सब कुछ

सहन कर सकता है, किन्तु भूख को सहन नहीं कर सकता। आचार्य महाप्रज्ञजी के मत में था कि हिंसा का मुख्य कारण भूख है। जहां बीस-तीस करोड़ लोग दो समय की रोटी का भी इंतजाम नहीं कर पाते और दस-बीस करोड़ लोग वैभव का जीवन जीते हैं, वहां नये अर्थशास्त्र की अपेक्षा होती है। एक ऐसा अर्थशास्त्र जो कम से कम आदमी को जीने के लिए रोटी तो उपलब्ध करा सके।

कुछ वर्षों पहले विकास के आंकड़ों से पता चला है कि अमेरिका जैसा विकसित और संपन्न राष्ट्र जहां इकतीस सौ अरब डालर के उत्पादन की क्षमता है, वहां भी तीन करोड़ लोग गरीबी की रेखा के नीचे जी रहे हैं। यह एक बड़ी विसंगति है। इसे दूर करना आवश्यक है। आज के विकास की सबसे बड़ी व्यथा यह है कि विश्व में धनी लोगों के आंकड़े देखे जाते हैं। हिन्दुस्तान में कितने करोड़पति-अरबपति बने, अमेरिका में कितने बने, यह जानने में दिलचस्पी ज्यादा है, लेकिन अन्न के अभाव में कितने दम तोड़ गए, कितने फुटपाथों पर नारकीय यातना झेल रहे हैं-ये आंकड़ें कम आते हैं। यह विषमता अनेक प्रकार की समस्या की जनक है। मानवीय एकता की भावना मूलभूत आवश्यकताओं में मानव मानव के बीच अन्तर नहीं करती है और समानता की भावना को पुष्ट करेगी।

करुणा एवं संवेदनशीलता

मनुष्य में अनेक प्रकार के संवेग हैं-अहंकार, लोभ, भय, क्रूरता, वासना आदि। कभी-कभी करुणा और संवेदनशीलता के भाव भी पैदा होते हैं, किन्तु ज्यादा प्रबल संवेग हैं-भय, वासना, अधिकार और लोभ के। ये इतने प्रबल हैं कि करुणा की भावना, संवेदनशीलता की भावना उत्पन्न ही नहीं होने देते। यून. एन. ओ. की एक रिपोर्ट में बताया गया है कि एक सौ तिहत्तर राष्ट्रों में आर्थिक विकास (इकोनोमिक ग्रोथ) में अमेरिका का आठवां नम्बर है, किन्तु अपराध, बलात्कार, हत्या, अपहरण आदि में अमेरिका नम्बर एक पर है। अमीरी विलासिता को जन्म देती है और विलासिता क्रूरता को। आर्थिक विकास के लिए दोनों ही ठीक नहीं है। इनके कारण गरीबी और बेराजगारी की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। गरीबी, बेराजगारी की समस्या को दूर करने के लिए भावनात्मक विकास आवश्यक है।

यू. एन. जी. पी. की एक रिपोर्ट के अनुसार विश्व में पांच अरब तीस करोड़ आदमी हैं। उनमें एक अरब तीस करोड़ धनी हैं या अमीर देशों में हैं और चार अरब आदमी निर्धन या विकासशील देशों में हैं। यह बहुत बड़ा अन्तर है। इसका अर्थ है सतत्तर प्रतिशत लोग गरीब हैं। विश्व की आय का उन्नीस प्रतिशत मात्र निर्धनों को मिलता है। इक्यासी प्रतिशत अमीरों की जेब में जा रहा है। इतनी बड़ी असमानता की स्थिति में गरीबी को दूर कैसे करें?यह आज का अहम् प्रश्न है? गरीबी मिटाने की चाबी अमीर देशों के हाथ में है। वे चाहें तो गरीबी को मिटा भी सकते हैं और चाहे तो बढ़ा भी सकते हैं। जो धनी बन गए, उनमें आपस में स्पर्धा है, दूसरों का स्वामी बनने की। करुणा, संवेदनशीलता होती तो अमीरी एवं गरीबी की खाई नहीं पनपती। इस स्थिति को तब तक नहीं बदला जा सकता, जब तक महावीर के इस सिद्धान्त 'स्वामित्व का सीमाकरण करो' को स्वीकार नहीं कर लिया जाता। संग्रह का सीमाकरण होता है तो गरीबी की समस्या सुलझाई जा सकती है, बेरोजगारी की समस्या को भी सुलझाया जा सकता है।[३]

नोबेल पुरस्कार से सम्मानित अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन का आर्थिक चिन्तन बताता है कि गरीबी दुर्भाग्य नहीं, वितरण में होने वाली असमानता एवं अन्याय के कारण है। उदारीकरण और वैश्वीकरण ने ग्रामीण अंचलों को उपेक्षित कर दिया है। शहरों के आर्थिक ढांचे के निर्माण पर ही पूंजी को केन्द्रित किया जा रहा है। विशेषकर गांवों में रोजगार के अवसर नहीं होने से लोगों का रोजी-रोटी के लिए उन्नत शहरों और प्रगतिशील राज्यों की ओर पलायन हो रहा है।

आधुनिक उद्योगों में लाखों श्रमिकों के श्रम से किये गये उत्पादन के लाभ का एक बहुत बड़ा भाग पूंजीपति के हिस्से में जा रहा है। दूसरी ओर श्रमिकों को जीवन यापन हेतु भी पूरा नहीं मिल रहा है। ऐसी स्थिति के कारण औद्योगिक जगत में हड़ताल और वर्ग संघर्ष हो रहे हैं। बढ़ती हुई असमानता एवं भोगवाद से उपजी पीड़ा और उसकी प्रतिक्रिया ही सभी अनैतिक अपराध, आंतकवाद, अलगाववाद, हत्या तथा हिंसक कृत्यों की जननी है। एक ओर बड़ी-बड़ी कोठियां, छोटे-छोटे सफर भी हवाई जहाज से, विशाल मॉल में खरीददारी और दूसरी ओर आम आदमी को दो समय का भोजन भी सुलभ नहीं है। इस स्थिति में उनके मन में विद्रोह की भावना उठती है। असमान वितरण एवं गरीबी के कारण 75 मिलियन बच्चे कुपोषण के शिकार हैं। 3,89,000 बच्चे प्रतिवर्ष विटामिन की कमी के कारण आंखों की बीमारियों से ग्रसित होते हैं। शहरों में 22 मिलियन बच्चे सड़कों पर जीते हैं। देश में करीब 8 करोड़ शिक्षित बेरोजगार हैं। 20 करोड़ ऐसे हैं जो आंशिक रूप से नियोजित हैं।[३] भारतीय वाणिज्य मंत्रालय के अनुसार वर्ष 2008 में, अगस्त और अक्टूबर मास के बीच आर्थिक मंदी के कारण निर्यातक्षेत्र में 50 लाख लोगों की नौकरियां गई थी। सूचना प्रौद्योगिकी में 9 प्रतिशत प्रति मास बेरोजगार बढ़ रहे थे अब घटकर 2–3 प्रतिशत रह गए हैं।[४] इसे और भी कम किया जा सकता है यदि मानवीय करुणा का विकास हो।

करुणा के विकास के लिए आत्मौपम्य की अनुभूति आवश्यक है। यह अनुभूति जितनी प्रखर होती है, करुणा उतनी ही विकसित होती है। करुणा के होने पर मनुष्य में शोषण, अन्याय आदि से धन कमाने की प्रवृत्ति नहीं पनपती। वर्तमान समस्याओं का बहुत बड़ा कारण है-करुणा का अभाव। पिछले चार दशकों से क्रूरता बढ़ती जा रही है, करुणा घटती जा रही है। संवेदनशीलता का धागा टूटता जा रहा है। आदमी समाज के प्रति संवेदनशील हो, दूसरों को अपने समान समझे, दूसरों की पीड़ा को अपनी पीड़ा समझे, यह तथ्य आज विस्मृत जैसा हो रहा है। आदमी को मारना आज तिनके को तोड़ने जैसा हो रहा है। थोड़े से धन के लिए आदमी को मारना सामान्य बात हो गई है।

इस स्थिति में सुधार के लिए शिक्षा में बौद्धिक विकास के साथ भावात्मक विकास पर पूरा ध्यान देने की आवश्यकता है। यदि बौद्धिक विकास के साथ-साथ भावात्मक विकास भी होता, मस्तिष्क के बाएं पटल के साथ-साथ दायां पटल भी विकसित होता तो गरीबी, अमीरी, शोषण, अपराध, संघर्ष, भेदभाव आदि समस्याएं स्वतः समाप्त हो जाती, उन्हें पनपने का अवसर प्राप्त ही नहीं होता। आचार्य महाश्रमण ने जीवन विज्ञान के रूप में शिक्षा के इस अधूरेपन को पूरा करने का प्रयत्न किया गया है। उसमें बौद्धिक विकास के साथ-साथ भावात्मक विकास पर बल दिया गया है।

❑